हिंदी संत साहित्य के पारिभाषिक शब्द

डॉ. श्रीपति कुमार यादव
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, सतीश चन्द्र कालेज, बलिया

वस्तुतः ज्ञान–विज्ञान की खोजपूर्ण नवपरिणति की अभिव्यक्ति हेतु प्रयुक्त अभिधेयार्थबोधक शब्द पारिभाशिक शब्द कहलाते हैं। अभिधेयार्थबोधक का अर्थ यह है कि पारिभाशिक शब्द एक निश्चित प्रतीति हेतु प्रयुक्त होते हैं। साहित्य, संगीत और कला की भाँति ये शब्द लक्ष्यार्थ या व्यंग्यार्थ बोधक नहीं होते। वास्तव में तकनीकी या पारिभाशिक शब्दों का प्रयोग केवल भौतिकी, रसायन या यांत्रिक विज्ञान के लिए ही नहीं होता प्रत्युत विज्ञान सहित मानविकी से सम्बद्ध ज्ञान की अन्य शाखाओं में भी निश्चित अर्थ के द्योतन हेतु उनकी आवश्यकता पड़ती है। विशेश अर्थ के प्रकाशन हेतु कभी– कभी निर्धारित ध्वनि संकेतों या वाक्संकेतों को जब विशेशज्ञ निश्चित अर्थ की सीमा में बाँध देते हैं तो वह शब्द ज्ञान विशेश की उस शाखा के लिए तकनीकी या पारिभाशिक शब्द बन जाता है। अध्यात्मिक भावों का बोझ वहन करने में भाशा सदा से ही असमर्थ रही है, अन्यथा 'नेति नेति' कहकर भारतीय मनीशी मौन क्यों ग्रहण कर लेते?भाशा मानव के गूढ़तम रागात्मक भावों को भी पूर्णतः ग्रहण नहीं कर पाती। हिंदी संत साहित्य में अनेक ऐसे शब्दों का प्रयोग हुआ है जो परम्परा की दृश्टि से एक विशेश अर्थ में रूढ़ हो चुके हैं। परम्परा की दृश्टि से ऐसे पारिभाशिक शब्दों का सम्बन्ध हठयोग साधना से अधिक है, जिनके विकास में नाथयोगियों व वज्रयानी–सहजयानी बौद्ध सिद्धों का विशेश सहयोग रहा है। आगे हम हिंदी संत साहित्यमें प्रयुक्त पारिभाशिक शब्दों पर विचार करेंगे।

अजपा जाप– वह जाप जिसमें किसी प्रकार के स्थूल साधनों का उपयोग न हो, जैसे– माला फेरना या किसी अन्य प्रकार से नामों को गिनना, नामोच्चारण करना आदि। प्रत्येक व्यक्ति चौबीस धंटे में 21600 श्वास भीतर लेता है और 21600 उच्छ्वास बाहर फेंकता है। योगियों का विश्वास है कि श्वास–प्रश्वास के साथ बिना उच्चारण किए हुए, बिना बोले हुए अवधानपूर्वक 'सोहं' अथवा 'हंसः' का जप करते रहे तो वह अजपा जाप कहलाता है–

शरीर शब्द अरु श्वांस करि, हरि सुमिरन तिहं ठांव।
जन रज्जब आगम अगम, अजपा इसका नांव।।

अनाहत नाद– संसार में कर्णेन्द्रियों के माध्यम से जो भी नाद सुनाई पड़ता है वह सब 'आहत नाद' है क्योंकि वह किन्हीं दो वस्तुओं के टकराने से उत्पन्न होता है। हम सामाजिक उपयोग के लिए जिस भाशा (बैखरी वाणी) का प्रयोग करते हैं उसके शब्द ध्वनि अवयवों के टकराने से उत्पन्न होते हैं। अतः हमारी लौकिक भाशा 'आहत नाद' की भाशा है। जब तक साधक की प्रवृत्ति बहिर्मुखी होती है तब तक वह आहत नाद ही सुन सकता है किंतु जब उसकी प्रवृत्ति अन्तर्मुखी हो जाती है और वह अपनी चित्तवृत्ति को भीतर की ओर प्रवाहित कर लेता है तब उसे 'अनाहत नाद' सुनाई पड़ता है। योग साधना की शब्दावली में यह 'नादानुसंधान' की क्रिया है। 'नाद का अनुसंधान' 'शब्द ब्रह्म' का अनुसंधान है। चित्तवृत्ति के अन्तर्मुखी होने पर आरम्भ में जो अन्तर्लोक में अनेक प्रकार की आकर्शण ध्वनियाँ सुनाई पड़ती हैं। वे वास्तविक अनाहत ध्वनियाँ नहीं हैं। वे साधक का ध्यान बँटाने के लिए अपनी ओर उसे आकृश्ट करती हैं। इनके आकर्शण से अपने को मुक्त करके योगी साधक अपना ध्यान हृदय के अन्तरतम प्रदेश में लीन करता है। 'अनाहत चक्र' ही 'अनाहत नाद' का केन्द्र है। अपनी अन्तर्मुखी चेतना को अनाहत चक्र में लीन करके योगी उस 'शब्द ब्रह्म' का अनुभव करता है। जो समग्र विश्व में अखण्ड रूप में व्याप्त है।2 संत साहित्य में 'अनाहत नाद' या 'अनहद नाद' का प्रयोग मिलता है –

बजत अनहद नाद सिंगी बजत अनहद नाद।।
विश्णु ब्रह्मा आदि सुरपति शंभु औ सनकादि।
जती जोगी सिद्ध धावै खोजते सब बादि।।

उन्मन – सामान्यतः उन्मन से अभिप्राय है मन

की एक विशिष्ट स्थिति जिसमें वह संसार के क्रिया–कलापों से हटकर ब्रह्म की ओर अग्रसर होता है। इस अवस्था में मन की सारी चंचलता समाप्त हो जाती है। मन जब इस संसार में न रमकर संसार से ऊपर पारलौकिक चिन्तन में लग जाता है तब ध्यानावस्थित होकर सुरति को अग्रनख (अग्रदृष्टि) के भीतर की ओर प्रेरित करने की क्रिया का नाम उन्मनि मुद्रा या महामुद्रा है। गोरखपंथी योग साधना में इसे 'मनोन्मनी' अवस्था कहते हैं –

मन लागा उन्मन सौ, गगन पहुँचा जाय।
देल्या चंद बिहूँड़ा चांदिणां, तहाँ अलख निरंजन राय।।4

सुरति–निरति – संत साहित्य में प्रचलित महत्त्वपूर्ण पारिभाशिक शब्द है। इन शब्दों को लेकर सर्वाधिक विचार मंथन हुआ हैं। बाबू सम्पूर्णानन्द 5 'सुरति' को स्रोत का बिगड़ा हुआ रूप मानते हैं और इसका अर्थ चित्तवृत्तियों का प्रवाह करते हैं। डॉ पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल 6 'सुरति' को 'स्मृति' से निकला हुआ मानते हैं। आाचार्य क्षितिमोहन सेन ने 'सुरति' का अर्थ 'प्रेम' किया है। आचार्य परशुराम चतुर्वेदी 7 'सुरति' से 'शब्दोन्मुख चित्त' अर्थ लेते हैं। श्री पुरुषोत्तमलाल श्रीवास्तव 8 'सुरति' का मूल 'श्रुति' मानते हैं। उनके अनुसार अंतर्नाद या अन्तरात्मा के शब्द (श्रुति) को सुनने के लिए श्रुति (श्रवणवृत्ति) को वाह्य व्यक्त शब्दों से हटाकर एकाग्र और अंतर्मुखी करना आवश्यक है। इस प्रकार सुरति की व्युत्पत्ति को लेकर विद्वानों में पर्याप्त मतभेद हैं किंतु इसके तात्पर्य को लेकर कोई विशेष मतभेद नहीं है। सभी विद्वान् यह स्वीकार करते हैं कि 'सुरति' अन्तर्मुखी चित्तवृत्ति ही है। जो चित्तवृत्ति सांसारिक विषयों की ओर प्रवाहित है, वह जब ईश्वरोन्मुख हो जाती है तो उसे 'सुरति' कहते हैं। दूसरे शब्दों में 'प्रेमानुरक्त ध्यान और स्मरण' भी कह सकते हैं। निरति–सुरति की चरमावस्था है। डॉ. बड़थ्वाल के अनुसार 'निरति' 'पूर्णतन्मयता' की स्थिति है। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी9 के अनुसार सारे भ्रमजाल से निरत होकर अन्तर्मुख होने की प्रवृत्ति का नाम ही 'निरति' है। कुछ विद्वानों के अनुसार 'निरति' वैराग्यवृत्ति या सांसारिक विशयों से अनासक्त का द्योतक है। यह निरालंब स्थिति है, सहज स्थिति है। निरतिशय रूप से नाद ब्रह्म में लय ही निरति है–

सुरति समानी निरति मैं, निरति रही निरधार।
सुरति निरति परचा भया, तब खुले स्यंभ दुआर।। 10

निरंजन – सिद्धों एवं संतों की साधना में निरंजन शब्द का प्रयोग विशेश रूप से पाया जाता है। 'निरंजन' शब्द का शाब्दिक अर्थ है 'अंजन' से रहित। अंजन या कालिमा से तात्पर्य है– त्रिगुण। अतः निरंजन का तात्पर्य है– माया रहित, त्रिगुणातीत, निर्गुण सत्ता।

राम निरंजन न्यारा रे, अंजन सकच पसारा रे।11

सहज–शून्य – संतों ने 'सहज' और 'शून्य' शब्दों का प्रयोग प्रायः एक साथ किया है। 'शून्य' शब्द मूलतः बौद्ध–दर्शन का शब्द है। आध्यात्मिक बौद्ध शून्य को अनिवर्चनीय मानते थे। नाथ–पंथ में 'शून्य' का प्रयोग इससे भिन्न अर्थ में किया गया है। नाथ योगियों के अनुसार सहस्रार चक्र ही शून्य चक्र है। इस चक्र में पहुँचकर जीवात्मा सुख–दुख, राग–द्वेश, हर्श–अमर्श इन सभी द्वन्द्वों से ऊपर उठ जाता है। यही शून्यावस्था है। नाथ योगियों के लिए यह शून्यावस्था ही सहजावस्था है। इस प्रकार 'शून्य' और 'सहज' एक ही स्थिति के बोधक है। 'शून्य' की उपलब्धि ही 'सहज' की उपलब्धि है –

सहजै सहजै सब गये, सुत वित कामिणी काम।

(सरस्वती) है जो उक्त दोनों के मध्य से होकर ब्रह्मरन्ध्र तक गयी है। इसे शून्य, राजपथ, मद्यपथ, श्मशान, शाम्भवी, मध्यमार्ग, ब्रह्मनाड़ी और सरस्वती आदि नामों से भी अभिहित किया गया हैं।

योग परम्परा में इड़ा, पिंगला और सुशुम्ना नाड़ियों का बहुत अधिक महत्त्व हैं। इन तीनों नाड़ियों की चर्चा संत साहित्य में अनेक स्थलों पर हुई हैं। कहीं–कहीं पर गंगा, यमुना, सरस्वती के लिए चन्द्र, सूर्य और सुशुमनि जैसे शब्दों का प्रयोग भी मिलता हैं।15 अधिकतर स्थलों पर इड़ा–पिंगला के लिए गंगा–यमुना तथा सुशुम्ना के लिए सरस्वती,

सुखमनि आदि शब्दों का प्रयोग भी परम्परानुसार संत साहित्य में मिलता हैं। संत बुल्ला साहब ने कहा है –

गंग जमुना मिलि सरस्वति, उमँगि सिखर बहाव।
लवकंति बिजुली दामिनी, अनहद गरज सुनाव।।16

अरध–उरध – नाथ और संत साहित्य में अरध–उरध शब्दों का प्रयोग इड़ा– पिंगला, सूर्य–चन्द्र संगम, कुण्डलिनी के उर्ध्वगमन, नाद–बिन्दु संयोग, मूलाधार और सहस्रार चक्र आदि कई अर्थों में प्रयुक्त हुआ हैं। कहीं–कहीं प्रसंग वश यह अभिधामूलक नीचे–ऊपर अर्थ भी देता है।17

खाविंद को जो कोई ध्यावै, अरध उरध बिच तारी लावै।।
साँस उसाँस से सुमिरन मंडे, करम कटै चौरासी खंडे।।18

त्रिवेणी – इड़ा, पिंगला और सुशुम्ना के संगम स्थल को त्रिवेणी कहा जाता है। इन तीनों नाड़ियों का मिलन दोनों भौहों के मध्य में होता हैं। संत साहित्य में इसे त्रिकुटी के नाम से भी अभिहित किया जाता है। आज्ञाचक्र (भौहों के मध्य) से केवल सुशुम्ना ब्रह्मरन्ध्र तक तिरछी गई है जिसे 'बंकनाल' भी कहते हैं। कतिपय विद्वानों ने 'त्रिवेणी' संगम को ब्रह्मरन्ध्र या दशमद्वार में स्थित माना हैं। हठयोग ग्रथों के अनुसार साधना द्वारा तीनों नाड़ियों के सम हो जाने पर दशमद्वार खुल जाता है और साधक सहस्रार से स्रवित होने वाले अमृत का आस्वादन करने लगता है।19

झिलमिलि झिलमिलि तिरबेनी संगम, अविगत गति ब्रह्म जागो।
सुर नर मुनि जाको अंत न पावहिं, सो मेरे नैनन आगो।।20

गगन मंडल – संत साहित्य में गगन गुफा, गगन मंदिर आदि शब्दों का बहुत प्रयोग हुआ हैं। गगन गुफा से तात्पर्य कपाल–कुहर में स्थित सहस्रार से है। सहस्रार को कहीं–कहीं पर 'गगन मंडल' भी कहा गया है। योग परम्परा की दृश्टि से जब कुंडलिनी शट्चक्रों का भेदन करके सहस्रारचक्र में प्रवेश करती है तो उस उस दशा को ही शून्य–मंडल, गगन, आकाश मंडल आदि नामों से जाना जाता है। इसी स्थान पर अधोमुख कूप (ब्रह्मरन्ध्र) की कल्पना की गयी है। यहाँ पहुँचकर ही साधक को अनहद नाद सुनाई देता है। 'प्रज्ञा' का 'उपाय' में 'शक्ति' का 'शिव' में 'चित्ति' का 'आनन्द' में विलय हो जाता है और साधक 'सिद्ध' संज्ञा को प्राप्त होकर परम पद की प्राप्ति कर लेता है। संत साहित्य में 'गगन' के पर्याय के रूप में अनेक स्थानों पर 'शून्य' शब्द का भी प्रयोग हुआ है और गगन को शून्य शिखर, शून्य महल आदि नाम भी दिये गये हैं। गगन अथवा शून्य सहस्रार का भी प्रतीक है।

गगन गुफा के बीच में री, उठै सोहं शब्द प्रकाश हेली।
आठ पहर निरखत रहै, तहाँ बैठा पलटूदास हेली।।21

अमृत – 'अमृत' शब्द संस्कृत के 'अम्र' या 'अम्ल' का रूपान्तर माना जाता है जिसका अर्थ है खट्टा। पारिभाशिक रूप में तांत्रिक परम्परा में 'अमृत' शब्द का प्रयोग वारुणी (मद्य) और पंच मकारों के अर्थ में हुआ है।22 हठयोग परम्परा में सहस्रार स्थित चन्द्राकार स्थान से अमृत स्राव का वर्णन है जो इड़ा या चन्द्र नाड़ी के माध्यम से प्रवाहित होता है। कुंडलिनी के सुशुप्तावस्था में होने पर यह अमृतरस मूलाधार स्थित सूर्य द्वारा शोशित होकर व्यर्थ होता है। योगाभ्यास द्वारा अमृत प्रवाह के अधोगमन को रोक कर योगी खेचरी मुद्रा द्वारा इसका आस्वादन करता है और अमरत्व प्राप्त करता है। संत साहित्य में तांत्रिकों का अमृत (मद्य) तो निशिद्ध है किंतु हठयोग पद्धति के 'अमृत' को स्वीकार किया गया है। शून्य शिखर, शून्य महल अथवा गगन से होने वाली अमृत वर्शा की चर्चा संत साहित्य में बहुशः हुई है।23 हठयोग की जटिल प्रक्रियाओं से विरक्त संत–साधकों ने भक्ति के प्राधान्य के कारण सुरति–शब्दयोग के संदर्भ में प्रायः 'शब्द' अथवा 'नाम' को ही अमृत कहा हैं और इसे हठयोगियों के उस अमृत स्राव से भिन्न सिद्ध करने की भी चेश्टा की हैं जिसका जिह्वा उलटी करके (खेचरी मुद्रा में) पान किया जाता है –

इंगला पिंगला सुखमनि अजपा, काल वारुणी नहीं पीजै।
नाम का परिचय कोइ कोइ पावै, शब्द अमीरस सुधि भीजै।।24

संदर्भ ग्रंथ :

1. रज्जब बानी – अजपा जाप का अंग – पृ. 52, साखी 1
2. डॉ. रामचन्द्र तिवारी – कबीर–मीमांसा, (परिशिश्ट) पृ. 1
3. सत्यराम शास्त्री (संपा.) – पलटू साहब की शब्दावली, पृ. 233 / 652
4. कबीर ग्रंथाावली, पृ. 13 / 157
5. विद्यापीठ त्रैमासिक पत्रिका, भाग–2, पृ. 135
6. डॉ. पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल – हिंदी काव्य में निर्गुण संप्रदाय, (परिशिश्ट) 3, पृ 418
7. आचार्य परशुराम चतुर्वेदी – कबीर साहित्य की परख, पृ. 252
8. डॉ. पुरुशोतम लाल श्रीवास्तव – कबीर साहित्य का अध्ययन, पृ. 384
9. डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी – सहज साधना, पृ. 76
10. कबीर ग्रथावली, पृ. 5 / 22
11. वही, पृ 201 / 336
12. वही, पृ. 21 / 3
13. सत्यराम शास्त्री (संपा.) – पलटू साहब की शब्दावली, पृ. 296 / 833
14. वही, पृ. 34 / 118
15. हरिनारायण पुरोहित (संपा.) – सुन्दर ग्रंथावली, भाग–दो, पृ. 871
16. बुल्ला साहब का 'शब्दसार', पृ. 1 / 2
17. हिंदी साहित्य कोश, भाग–1, पृ. 984
18. यारी साहब की 'रत्नावली', पृ. 9 / 8
19. डॉ. रमेश चन्द्र मिश्र – हिंदी संतों का उलटवांसी साहित्य, पृ. 151
20. बुल्ला साहब का 'शब्दसार', पृ. 11 / 11
21. सत्यराम शास्त्री (संपा.) – पलटू साहब की शब्दावली, पृ. 145 / 413
22. हिंदी साहित्य कोश, भाग–1, पृ. 53
23. कातिक अश्ट कॅवल दल भीतर, अगम जोति दरसे। चमके बिजुली मेध जो गरजे, अमृत जल बरसै।। –धरमदास की शब्दावली, पृ. 57
24. जवाहरपति साहब – शब्द प्रकाश, शब्द–99